वी. डी. चौधरी बनाम उत्तर प्रदेश सरकार व एक अन्य

1 सितंबर, 2005

[अरिजीत पसायत और अरुण कुमार, न्यायाधिपतिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:

धारा 438, 439 - जमानत - निरस्तीकरण - अभियुक्त का मामले को विलंबित और लंबा करना - अभिनिर्धारित किया गया - जमानत रद्द करने के लिए उपयुक्त मामला - हालाँकि, विचारण अदालत ने चार महीने में अन्वीक्षा पूरा करने का निर्देश दिया क्योंकि अभियोजन पक्ष का साक्ष्य व्यावहारिक रूप से पूरा हो गया था।

अपराध - एफ. आई. आर. में इंगित अपराध की प्रकृति अनुचित पाई गई, अभिनिर्धारित किया गया : पुलिस आरोप पत्र में उचित अपराध का संकेत दे सकती है।

अभियुक्त प्रत्यर्थी संख्या 2 के खिलाफ धारा 304- ए और 338 भारतीय दंड संहिता के तहत एक मामला दर्ज किया गया था । जांच के बाद, धारा 304 ओर 338 भादंसं के तहत आरोप पत्र दायर किया गया था। अभियुक्त को को धारा 304 ए, 338 भादंसं के तहत अपराध के लिए जमानत दी गई थी। उसने अपराध अंतर्गत धारा 304 और 338 भादंसं के तहत जमानत के लिए आवेदन प्रस्तुत किया था। उच्च

न्यायालय ने मजिस्ट्रेट को भादंसं की धारा 304 के तहत अतिरिक्त अपराध के लिये जमानत स्वीकार करने का निर्देश दिया।

इस अदालत मे अपील में, शिकायतकर्ता ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय को आरोपी की यह दलील स्वीकार नहीं करनी चाहिये थी कि जमानत पर, अन्वीक्षा को लंबी खींचा गया था।

न्यायालय ने अपीलका निपटारा करते हुये अभिनिर्धारित किया कि-

1. उच्च न्यायालय ने जमानत देने का कोई कारण नहीं बताया है। भादंसं की धारा 304 के तहत अपराध करने का आरोप लगाते हुये आरोप पत्र दायर किया गयाथा। केवल इसलिये कि पहले कुछ समय मे जांच इस तरह आगे बडी जैसे कि धारा 304-ए के तहत दंडनीय अपराध किया गया हो, फिर भी पुलिस द्वारा उचित अपराध का संकेत देने वाली चार्जशीट दाखिल करने पर कोई रोक नहीं है। [1098-बी]

उमर उस्मान चमडिया बनाम अब्दुल एवं अन्य, जे. टी. (2004) 2 एस. सी. 176, का संदर्भ दिया गया ।

2. यदयपि, उपर बताई गई कमजोरियो को देखते हुये यह जमानत रदद करने का उपयुक्त मामला है, इस तथ्यपर विचार करते हुये कि अभियोजन साक्ष्य व्यवहारिक रूप से बंद है, विचारण न्यायालय को दिसंबर 2005 के अंत तक मुकदमा पूरा करने का निर्देश दिया जाता है। प्रतिवादी- अभियुक्त संख्या 2 को मुकदमे को पूरा करने के लिए पूरी

तरह से सहयोग करने और अनावश्यक स्थगन की मांग नहीं करने का निर्देश दिया जाता है; यदि न्यायालय को लगता है कि वह दी गई जमानत का लाभ उठा रहा है जो लगभग पांच साल से जारी है, और प्रतिवादी संख्या 2 को देरी और/या साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ के लिए जिम्मेदार पाया जाता है, तो विचारण अदालत जमानत को रद्द करने का निर्देश देगी। (1099 - डी,ई,एफ)

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील संख्या 1115/2005

आपराधिक विविध प्रार्थना-पत्र संख्या 9682/2003 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय निर्णय और आदेश दिनांक 19.11.2003 से ।

पी. के. जैन, अधिवक्ता, अपीलार्थी के लिये।

के. बी. सिन्हा, डी. के. गोस्वामी और आतिशी दीपांकर, प्रतिवादीगण के लिये।

न्यायालय का फैसला अरिजीत पसायत, न्यायाधिपति द्वारा दिया गया था: अनुमति दी गई।

परिवादी ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा प्रतिवादी संख्या 2 (जिसे इसके बाद 'अभियुक्त' के रूप में संदर्भित किया गया है) को जमानत देने के आदेश की वैधता पर सवाल उठाया है।

अनावश्यक विवरणों के बिना पृष्ठभूमि के तथ्य इस प्रकार हैं:

दिनांक 5.2.2000 को परिवादी ने प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई। उसमें कहा गया था कि जब वह और उसका बेटा एक शादी की पार्टी में शामिल हो रहे थे, तो प्रतिवादी-अभियुक्त ने अपनी बंदूक से गोलियो चलानी शुरू कर दी। जब उसे ऐसा करने से मना किया गया तो वह नहीं रूका और फायरिंग जारी रखी। अभियुक्तो द्वारा चलाई गई गोलियो से अपीलार्थी का पुृ सौरभ घायल हो गया और चोटो के कारण उसकी मृत्यु हो गई। प्रारंभ में, पुलिस ने भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'भा.दं.सं.') की धारा 304-ए और 338 के तहत दंडनीय अपराधों का आरोप लगाते हुए मामला दर्ज किया। जांच के बाद धारा 304 ओर 338 भादंसं के तहत आरोप पत्र दायर किया गया। प्रसंज्ञान लिया गया था और कार्यवाही जारी की गई। अभियुक्त के द्वारा जमानत पर छोडे जाने के लिये प्रार्थना-पत्र दायर किया गया। आक्षेपित आदेश के द्वारा जमानत स्वीकार की गई।

अपीलार्थी के अनुसार, आरोपी करीब 2 साल से फरार था, जमानत के लिये उसकी प्रार्थना शुरू में ही खारिज कर दी गई थी। दंड प्रक्रिया संहिता 1973 (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 82 ओर 83 के तहत गैर-जमानती, वारंट और प्रक्रिया जारी की गई। इसके बाद उसे गिरुतार कर लिया गया। आरोपी के लिये यह प्रस्तुत किया गया था कि वह धारा 304-एऔर 338 भादंसं के अंतग्रत दंडनीयअपराध के लिये पहले से ही

जमानत पर था, एफआईआर और अन्य दस्तावेजो को पढने पर धारा 304-ए के तहत अपराध आरोपी के खिलाफ सामने आ सकता है लेकिन 'गुप्त रूप से' धारा 304 भादंसं के तहत अपराध में परिवर्तित कर दिया गया है। निम्नलिखित टिप्पणियो के साथ उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश के द्वारा जमानत प्रदान की-

> "ऐसा कहा जाता है कि भले ही प्राथमिकी और अन्य कागजात में लगाये गये आरोपो को उसके अंकित मूल्य पर सच माना जाये, धारा 304ए और 338 भादंसं के तहत अपराध आरोपी आवेदक के खिलाफ आपराधिक प्रकरण संख्या 2072/2002 राज्य बनाम देव कुमार, पीएस सदर बाजार, जिला सहारनपुर में दिखाई देगा। लेकिन गुप्त रूप से इसे धारा 304 भादंसं के तहत अपराध में परिवर्तित कर दिया गया। यह कहा गया कि आवेदक पहले से ही धारा 304-ए और 338 भादंसं के तहत अपराध के लिये जमानत पर था। मामले के तथ्यो और परिस्थितियोको देखते हुये विद्वान मजिस्ट्रेट को प्रकरण संख्या 2702/2002 में भादंसं की धारा 304 के तहत जोडेगये अपराध के लिये नये जमानत बॉड कोस्वीकार करने का भी निर्देश दिया गया ।
>
> आवेदन को तदनुसार निस्तारित किया जाता है।"

शिकायतकर्ता ने पारित आदेश की सत्यता पर सवाल उठाते हुये यह अपील दायर की है। उसके अनुसार, उच्च न्यायालय को अभियुक्तो की यह दलील स्वीकार नहीं करनी चाहिये थी कि पुलिस ने अपराध की प्रकृति को गुप्तरूप से बदल दिया है। यह स्पष्ट रूप से तथ्यो के विपरीत है। वास्तव में, जांच पूरी होने पर यह नोट किया गया कि लागू अपराध भादंसं की धारा 304 है, न कि 304-ए। इसमें कोई गुप्ता क्रत्य शामिल नहीं था और इसलिये, जमानत देना उचित नहीं है। उच्च न्यायालय ने जमानत देने का कोई कारण भी नहीं बताया हे। यह बताया गया है कि इस तथ्य का फायदा उठाते हुये कि आरोपी जमानत पर है, मुकदमे को लंबा खींचने का प्रयास किया जा रहा है और लगभग 5 साल बीत जाने के बावजूद शायद ही कोई प्रगति हुई है।

जवाब में, प्रतिवादी संख्या 2- अभियुक्त के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि सुसंगत कारको पर विचार करने के बाद जमानत दी गई है।

हमने पाया ककि उच्च न्यायालय ने जमानत देने का कोई कारण नहीं बताया है। जैसा कि तथ्यो से पता चलता है, भादंसं की धारा 304 के तहत अपराध करने का आरोप लगाते हुये आराप पत्र दायर किया गया था। केवल इसलिये कि पहले कुछ समय में जांच इस तरह आगे बढी जैसे कि धरा 304-ए के तहत दंडनीय अपराध किया गया हो, फिर भी पुलिस द्वारा उचित अपराध का संकेत देते हुये आरोप-पत्र प्रस्तुत करने पर कोई रोक

नहीं है। इस समय उमर उस्मान चमडिया बनाम अब्दुल और अन्य, जे. टी. (2004) 2 एस. सी. 176 में इस न्यायालय के फैसले पर ध्यान देना उचित होगा। पैरा 10 में, इसे इस प्रकार विचार व्यक्त किया गया था:

"हालांकि, निष्कर्ष निकालने से पहले, हमें इस मामले के एक अन्य पहलू पर ध्यान देना चाहिए। जिसने हाल के दिनों में हमारे लिये कुछ चिंता पैदा की है, हमारे पास कई बार यह देखने का मौका था कि उच्च न्यायालयों ने आपराधिक कार्यवाही में वकील द्वारा दिखाई गई रियायतों को दर्ज किया है। उन आदेशों में भी कोई कारण बताने से बचना चाहिए बचे, जिनके द्वारा अधीनस्थ अदालत के आदेशों को उलट दिया जाता है। हमारी राय में, यह उचित नहीं है यदि ऐसे आदेश अपील योग्य हैं, चाहे वह पक्षकारो की ओर से पेश विद्वान वकील द्वारा दिखाई गई रियायत के आधार पर हो या इस आधार पर कि विस्तृत कारण निर्दिष्ट करने से अधीन्स्थ अदालत के समक्ष भविष्य के मुकदमे में प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। उच्च न्यायालय को, जब तक कि बहुत बच्छे कारण न हो, उन आधारो को इंगित करने से बचना चाहिये जिन पर उनके आदेश आधारित है क्योंकि जब मामले अपील मे लाये जाते है, अपीलीय अदालत के पास यह जानने का हर कारण है कि विवादित आदेश किस आधार पर दिया गया है।

हो सकता है कि अधीनस्थ न्यायालय के आदेश से सहमति जताते समय, उक्त अपीलीय अदालत के लिये कारण बताना आवश्यक न हो, लेकिन इसलिये अधीनस्थ अदालतो के ऐसे आदेशो को पलटते हुये, ऐसा नहीं है। उक्त अदालत के लिये आधार या कारण बताये बिना आदेशपारित करना सुविधाजनक हो सकताहै, लेकिन ऐसे विवादित आदेशो की शुद्वता पर विचार करते समय अपीलीय अदालत के लिये यह निश्चित रूप से सुविधाजनक नहीं है। ऐसा न हो कि इससे पक्षकारो के मामले पर प्रतिकूल प्रभाव पड सकता है, लेकिन विवादित आदेश को पारित करने के लिये तर्क की प्रक्रिया का पर्याप्त संकेत होना चाहिये। तर्कसंगत आदेश देने की आवश्यकता कानून की एक आवश्यकता है जिसका अनुपालन सभी अपीलीय आदेशों में किया जाना चाहिये। कुछ इसी तरह की स्थिति में इस न्यायालय ने मामले में बिना कारण बताये पारित किये जाने वाले आदेशो की प्रथा की पंजाब राज्य और अन्य बनाम जगदेव सिंह तलवंडी एआईआर (1984) SC A 444), प्रकरण में निंदा की है।"

अभियुक्त के विद्वान वकील द्वारा यह प्रस्तुत किया गया कि जमानत दिये जाने के बाद स्वतंत्रता के दुरुपयोग का कोई आरोप नहीं है। हालांकि प्रतिवादी संख्या 2- अभियुक्त को रूख यह है िकअपीलकर्ता के

अनुसार मुकदमा निष्कर्ष के कगार पर है, किसी न किसीआधार पर मामले को स्थगित कर दियागया है। जैसा कि उद्धृत आक्षेपित आदेश से पता चलता है कि उच्च न्यायालय ने आवेदन पर उसके उचित परिप्रेक्ष्य मे विचार नहीं कियाथा। प्रतिवादी संख्या 2- अभियुक्त के विद्वान वकील द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि सभी गवाहो का परीक्षण पूरा को चुका है और केवल जांच अधिकारी (संक्षेप में 'आई. ओ.') को परीक्षित किया जाना है। यह प्रस्तुत किया गया है कि अनावश्यक रूप से स्थगन की मांग नहीं की जायेगी और किसी भी स्थिति में प्रतिवादी संख्या 2 - अभियुक्त मुकदमे को जल्द पूरा करने के लिये पूरा सहयोग करेगा।

हालांकि उपर बताई गई दुर्बलताओं को देखते हुए यह जमानत रद्द करने का एक उपयुक्त मामला है, इस तथ्य पर विचार करते हुए कि अभियोजन पक्ष का साक्ष्य व्यावहारिक रूप से बंद है, हम निम्नलिखित शर्तों में अपील का निस्तारण करते हैं:

(1) विचारण न्यायालय दिसंबर, 2005 के अंत तक विचारण पूरा करने का प्रयास करेगा।

(ii) प्रत्यर्थी संख्या 2 - अभियुक्त अन्वीक्षा को पूरा करने के लिए पूरी तरह से सहयोग करेगा । वह अनावश्यक स्थगन की मांग नहीं करेगा। यदि न्यायालय को लगता है कि वह दी गई जमानत का लाभ उठा रहा है जो लगभग पांच साल से जारी है, तो वह जमानत को रद्द करने का निर्देश देगा।

(iii) यदि मुकदमा निर्धारित समय के भीतर पूरा नहीं होता है और प्रतिवादी संख्या 2 देरी और/या सबूतो के साथ छेड़छाड़ के लिए जिम्मेदार पाया जाता है, तो विचारण अदालत रद्द करने का निर्देश देगी।

तदनुसार अपील का निस्तारण किया जाता है।

अपील निस्तारित की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल सुवास के जरिये अनुवादक की सहायता से किया गया है।

अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा मे किया जा रहा है एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिये उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नही ली जायेगी। सभी आधिकारित एवं व्यवहारिक उद्देशयो के लियेउक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन मे भी उसी को उपयोग मे लिया जायेगा।